भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 5 | **फरवरी** 2004 | **अंक** 2

आदमी मर जाता है लेकिन किताबें नहीं मरतीं। किताबें अमरता और भविष्य की प्रतीक हैं। जिन महान व्यक्तियों का निधन हो जाता है, उन्हें हम दोबारा नहीं पा सकते। जो जीवित हैं उनसे भी सम्पर्क बनाना बहुत मुश्किल होता है। अपनी महानता के कारण वे हमारी पहुँच के बाहर होते हैं लेकिन किताबों के जरिए हम सुकरात या शेक्सपीयर, कालिदास या भवभूति, कबीर या तुलसी, टाल्सटाय या गाँधी, प्रेमचंद या अज्ञेय-किसी से भी मुलाकात कर सकते हैं। आपके सामने किताबें उनके जीवन के सर्वश्रेष्ठ पक्ष खोल सकती हैं।

जो किताबें हम खरीदकर पढ़ते हैं वे तो हमारे अच्छे और बुरे दिनों में हमारा साथ निभाती ही हैं लेकिन जिन्हें हम माँगकर या उधार लेकर पढ़ते हैं वे भी, भले ही कुछ समय के लिए ही सही, हमारा साथ देने से कतराती नहीं। उधार ली हुई किताब घर में मेहमान की तरह होती है। उसके पन्ने नहीं मोड़ते। हम जानते हैं कि उसको एक दिन विदा करना है—हालांकि ऐसा हम बहुत कम होने देते हैं।

— डॉ० सुरेन्द्र वर्मा

पुस्तकों की रक्षा

उत्तम ज्ञान के प्रचार का उत्तम और मुख्य उपाय यह है कि उत्तम पुस्तकों का संग्रह कर दिया जाय, और ऐसा प्रबन्ध कर दिया जाय कि सच्चे जिज्ञासु विद्यार्थी उन पुस्तकों की रक्षा के साथ पढ़ सकें। इस सम्बन्ध में 'रक्षा' शब्द का अर्थ करना आवश्यक है। बहुत पुराना अनुभव यह है कि, मंगनी की पुस्तक के विषय में प्राय: लोग सद्बुद्धि छोड़ देते हैं। इसी से कहावत हो गयी है कि 'पुस्तकी....पर हस्तगता गता'। मेरा निजी अनुभव है कि लोग मँगनी न देने से बुरा मानते ही हैं, माँग कर स्वयं लौटाना जानते ही नहीं, तकाजे पर कोप करते हैं और यदि लौटाया भी तो प्राय: जिस रूप से पोथी गयी थी उस रूप से नहीं ही वापस आती। कभी जिल्द टूटी और मैली, कभी पन्नों के कोने मुड़े, कभी पन्ने फटे और गायब भी। अक्सर लोग, खाह-म-खाह, टेढ़े-मेढ़े, पेंसिल रोशनाई के निशान भी बना देते हैं, और व्यर्थ के नोट निहायत बदसूरती से लिख दिया करते हैं, जिससे पुस्तक नितान्त कुरूप हो जाती है।

—भारतरत्न डॉ० भगवानदास

विश्व-पुस्तक-राजधानी में विश्व पुस्तक मेला

यूनेस्को अन्तरराष्ट्रीय प्रकाशक संघ ने वर्ष 2003-04 के लिए दिल्ली को विश्व-पुस्तक-राजधानी घोषित किया है। 16वाँ विश्व पुस्तक मेला प्रगति मैदान नई दिल्ली में 14 से 22 फरवरी 2004 तक आयोजित है।

प्रथम विश्व पुस्तक मेले का आयोजन 1972 में विंडसर प्लेस में हुआ था। चार वर्ष बाद दूसरा विश्व पुस्तक मेला भी वहीं हुआ। उसके बाद प्रति दो वर्ष के अन्तराल पर विश्व पुस्तक मेले का आयोजन प्रगति मैदान में हेाता आ रहा है। दो सौ भागीदारों से शुरू हुए इस मेले में अब विश्व के लगभग 1100 प्रकाशक-पुस्तक-विक्रेता भाग ले रहे हैं। मेले में विश्व की अद्यतन ज्ञाननिधियाँ और जीवन्त संस्कृतियों को समेटती पुस्तकें प्रदर्शित होंगी। इस वर्ष इस मेले का प्रमुख विषय है—''विज्ञान-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विश्व सभ्यता को भारत का योगदान''।

दिल्ली भारत की राजधानी है, हृदयस्थली है, इससे सारे देश में संचार होता है। किन्तु क्या देश के दूरस्थ प्रदेशों, नगरों, गाँवों तक यह संचार पहुँच पाता है? सामान्य व्यक्तियों के लिए दिल्ली सदा दूर बनी हुई है। दूरस्थ गाँवों-कस्बों का पाठक आकाशवाणी की आवाज सुनने लगा है, दूरदर्शन की चकाचौंध भी देख लेता है, किन्तु ज्ञानवाहिनी पुस्तकों से वंचित रह जाता है। इस देश में पुस्तकें अभी उपभोक्ता सामग्री (जो दैनिक उपभोग की वस्तु होती है) नहीं बन पाई हैं। इसके लिए व्यापक स्तर पर कोई प्रयास भी नहीं हुआ है।

देश में साक्षरता के प्रतिशत में वृद्धि हुई है, किन्तु अध्ययन की प्रवृत्ति का विकास नहीं हुआ है। इसके लिए अपेक्षित प्रयास भी नहीं हुआ है। जो पुस्तकें पढ़ना चाहते हैं उनको पुस्तकों की जानकारी नहीं हो पाती और न उन तक पुस्तकें ही पहुँच पाती हैं।

देश के चार राष्ट्रीय पुस्तकालयों—नेशनल लाइब्रेरी, कोलकाता; सेण्ट्रल लाइब्रेरी, मुम्बई; कोनेमारा पब्लिक लाइब्रेरी, चेन्नई; दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी, दिल्ली को प्रकाशकों द्वारा नि:शुल्क पुस्तकें भेजी जाती हैं, यदि वे मासिक पत्र द्वारा प्रतिमास प्राप्त पुस्तकों की सूची और कुछ पुस्तकों की समीक्षा प्रकाशित करें, और वह पत्रिका अति सामान्य मूल्य पर उपलब्ध कराई जाय, तो इससे पाठकों को नई पुस्तकों की जानकारी होती रहेगी, देश में ज्ञान का आदान-प्रदान होगा।

इसके अतिरिक्त नगरों, गाँवों, कस्बों में पुस्तकें पहुँचने का साधन डाक है और डाक-व्यय इतना अधिक है जिसके कारण प्रबुद्ध पाठक चाह कर भी पुस्तक नहीं मँगा पाता। इसकी अपेक्षा है कि पुस्तकों के प्रेषण पर डाक-व्यय में कमी की जाय।

राष्ट्रपति ए०पी०जे० कलाम ने वर्ष 2020 तक जिस उज्जवल एवं प्रबुद्ध भारत की कल्पना की है, वह तभी साकार होगी जब नवीनतम ज्ञान जन-जन तक सुविधापूर्वक पहुँच सके।

— पुरुषोत्तमदास मोदी

विश्व पुस्तक मेले में हाल नं. 13 में
स्टॉल संख्या 178 पर विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी आपका स्वागत करता है।

पुरस्कार-सम्मान

पद्म-पुरस्कारों से सम्मानित साहित्यकार

गणतंत्र दिवस के अवसर पर देश के साहित्यकारों को पद्म पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा की गयी।

पद्म विभूषण : अमृता प्रीतम

पद्म भूषण : गोपीचंद नारंग (अध्यक्ष, साहित्य अकादमी), कृष्ण श्रीनिवास और विष्णु प्रभाकर।

पद्मश्री : आसिफ जमाली, औ वाकिर दस्तानुली निलि बायेव, गौरी ईश्वरन, हमलेट वारह नग पक्यंता हेनरिच फ्रेहर वाना स्टेटन क्रोन, के अयप्पा पानिकर, कन्हैयालाल सेठिया, कुमारपाल देसाई, लीलाधर जगूड़ी, पी० परमेश्वरन, प्रेमलता पुरी, पृथ्वीनाथ क्वाला, रमेशचन्द शाह और श्यामनारायण पाण्डेय।

साहित्य अकादमी पुरस्कार

साहित्य अकादमी, नई दिल्ली ने मार्च 2004 में आयोजित स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर पर 20 भाषाओं के 22 लेखकों को वर्ष 2003 का साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान करेगा।

असमिया : वीरेश्वर बरुआ : अनेक मानुष अनेक ठाई आरू निर्जनता (काव्य), **बंगला :** प्रफुल्ल राय : क्रांतिकाल (उपन्यास), **डोगरी :** स्व० अश्विनी गगोआ : झुल्ल बडा देआ पतरा (काव्य), **अंग्रेजी :** मीनाक्षी मुखर्जी : दी पेरिशेबल एम्पायर : एस्सेज आन इण्डियन राइटिंग इन इंगलिश, **गुजराती :** बिन्दु भट्ट : अखेपातर (उपन्यास), **हिन्दी :** कमलेश्वर : कितने पाकिस्तान (उपन्यास), **कन्नड़ :** के बी सुवन्ना : कविराज मार्ग मनु कन्नड़ जगतु (निबन्ध संग्रह), **कश्मीरी :** स्व० सोमनाथ जुत्थी : वे थेली फोलगाश (कहानी संग्रह) स्व० शशांक सीताराम : परीध (कहानी संग्रह), **मैथिली :** नीरजा रेणु : (कामाख्या देवी) ऋतंभरा (कहानी संग्रह), **मलयालम :** साराजोसफ : आल्हायुणे पेन्नमाक्कल (उपन्यास), **मणिपुरी :** सुधीर नाउरेइबाम् : लैई खरा पुंसिखरा (उपन्यास), **मराठी :** टी०वी० सरदेशमुख : डागोरा : एका नगरीचा (उपन्यास), **नेपाली :** कि दया सुब्बा : अथाह (उपन्यास), **उड़िया :** जतीन्द्रमोहन मोहान्ती : सूर्य स्नाल (आलोचना), **राजस्थानी :** संतोष मायामोहन : सिमरण (कविता संग्रह), **सिन्धी :** हीरो ठाकुर : तहकीक ऐन तनकीद (निबन्ध संग्रह), **तमिल :** आर वेर मतु : कल्लिकालु इति कासम (उपन्यास), उत्पल सत्यनारायणाचार्य : श्रीकृष्ण चंद्रोदयम् (कविता संग्रह), **उर्दू :** सैयद मुहम्मद अशरफ : वादे सबा का इंतिजार (कहानी संग्रह), **पंजाबी :** चरणदास सिद्धू : भगत सिंह शहीद (नाटक), **संस्कृत :** भास्कराचार्य त्रिपाठी : तिकड़ी तथा निर्झरिणी (कविता संग्रह)

सभी पुरस्कृत लेखकों को प्रशस्ति-पत्र एवं शाल के अलावा 50,000 रुपये की राशि का चेक प्रदान किया जायगा। शेष भाषाओं की कृतियों के लिए अलग से 'भाषा सम्मान' दिया जायगा।

साहित्य अकादमी, भोपाल

साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद ने वर्ष 1998-2000 के लिए 14 साहित्यकारों को पुरस्कृत करने का निर्णय किया है।

अखिल भारतीय पुरस्कार : आलोक धन्वा को 'दुनिया रोज बनती है' कविता संग्रह के लिए।

अन्य पुरस्कार

वीर सिंह देव : श्रीमती मुद्गल

गजानन माधव 'मुक्तिबोध' : रमाकांत श्रीवास्तव

रामचन्द्र शुक्ल : विजयकुमार

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी : रवीन्द्र कालिया को 'गालिब छूटी शराब के लिए'

प्रादेशिक पुरस्कारों के अंतर्गत

माखनलाल चतुर्वेदी : ओम भारती

सुभद्राकुमारी चौहान : महेश कटारे

विश्वनाथ सिंह : सत्येनकुमार

नंददुलारे वाजपेयी : मालम सिंह

मुकुटधर पाण्डेय : रामकृष्ण सराफ

रामविलास शर्मा : पवन करण

दुष्यंतकुमार : संजय शोम

शरद जोशी : संतोष खरे

रविशंकर शुक्ल : मालती बसंत

उपर्युक्त पुरस्कार आगामी मार्च में भोपाल में प्रदान किये जायँगे।

क्या प्रमुख हिन्दी साहित्यकारों की कर्मभूमि उत्तर प्रदेश का हिन्दी संस्थान अपने दिवंगत साहित्यकारों की स्मृति में वर्तमान साहित्यकारों को सम्मानित और पुरस्कृत करेगा? यह उत्तर प्रदेश है जिससे अपेक्षा की जाती है कि वह दूसरे प्रदेशों के समक्ष उत्तर प्रस्तुत करे, किन्तु मध्य प्रदेश इसे उत्तर दे रहा है—अपने साहित्यकारों का सम्मान करो।

पहल सम्मान

सुप्रसिद्ध कवि-कथाकार **उदयप्रकाश** को वर्ष 2003 का पहल सम्मान समर्पित किया गया है। सम्मान का आयोजन आगामी फरवरी महीने में नागपुर में होगा जिसमें देशभर के हिन्दी अहिन्दी भाषी रचनाकार एकत्र होंगे। इस अवसर पर उदयप्रकाश का कहानी पाठ, उनकी कहानी का नाट्य मंचन होगा और फोल्डर भी जारी किया जायेगा।

कमलेश्वर को साहित्य अकादमी सम्मान

कई वर्षों के बद यह श्रेष्ठतम सम्मान हिन्दी के एक मूर्द्धन्य कथाकार को मिला है। कुल सैंतालीस वर्षों में उपन्यासों को मिलने वाला यह चौदहवाँ सम्मान है, कहानी-संग्रह को अब तक बस एक ही बार सम्मानित किया गया है, तब **कमलेश्वर** को दिये गये इस सम्मान का तो और भी महत्त्व है। आश्चर्य है कि राही मासूम रजा, धर्मवीर भारती और मोहन राकेश जैसे कथाकारों को यह सम्मान नहीं मिला।

हिन्दी में कवियों को भले यह सम्मान ज्यादा बार मिला हो, लेकिन उनके चुने जाने की प्रामाणिकता पर सन्देह नहीं है। इसी तरह हाल के वर्षों में हिन्दी के जिन उपन्यासों को अकादमी सम्मान मिला, वे तीनों ही *मुझे चाँद चाहिए, कोलकाता वाया बाईपास* और *दीवार में एक खिड़की रहती थी,* कथ्य, शिल्प और भाषा की नवीनता के कारण अलग से ध्यान खींचते हैं।

कमलेश्वर को मिला सम्मान उनकी लम्बी साहित्य साधना का सम्मान तो है ही, उस हिन्दी का भी सम्मान है, जिसमें इतिहास के बहाने वर्तमान से मुठभेड़ की ऐसी अविच्छिन्न परम्परा है।

'कितने पाकिस्तान' जिस पर कमलेश्वर को साहित्य अकादमी सम्मान मिला है, उसके अब तक आठ संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं।

नागार्जुन पुरस्कार

हिन्दी के चर्चित कवि-समालोचक तथा प्रतिष्ठित पत्रिका 'नई धारा' के सम्पादक **डॉ० शिवनारायण** को बिहार सरकार के राजभाषा विभाग ने पटना के विद्यापति भवन में काव्य-विधा के सर्वोच्च सम्मान 'नागार्जुन पुरस्कार' से विभूषितकिया। बिहार सरकार के राजभाषा मंत्री प्रो० रामपदारथ महतो ने डॉ० शिवनारायण को ताम्र प्रशस्ति-पत्र एवं 51,000 रुपये की राशि प्रदान किया।

डॉ० शिवनारायण सम्प्रति मगध विश्वविद्यालय की अंगीभूत इकाई आर०आर०एस० कालेज (मोकामा, पटना) में हिन्दी के विभागाध्यक्ष हैं।

अलका पाठक को व्यंग्यश्री

वरिष्ठ हास्य यंग्यकार एवं कवि पं० गोपालप्रसाद व्यास के जन्म दिवस 13 फरवरी को इस वर्ष का सम्मान लेखिका एवं व्यंग्यकार **अलका पाठक** को प्रदान किया जायेगा।

मारीशस में हिन्दी और हनुमान

भारतीय मूल के प्रवासी मारीशस में अपने भाषायी संस्कारों से आबद्ध हैं। दैनिक व्यवहार में भोजपुरी उनकी आत्मीय भाषा है। वहाँ की राजभाषा अंग्रेजी और सर्वाधिक प्रचलित भाषा फ्रेंच है। उसके बावजूद हिन्दी अत्यन्त लोकप्रिय है। प्रतिवर्ष 30 से अधिक हिन्दी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, किन्तु उनका मुद्रण सामान्यत: भारत में होता है। मारीशस की हिन्दीप्रचारिणी सभा, आर्य सभा और हिन्दी स्पीकिंग यूनियन प्रतिवर्ष भारत से हिन्दी पुस्तकें मँगा कर मारीशसवासियों को सुलभ कराती है। वहाँ के स्कूलों में हिन्दी पढ़ाई जाती है, हिन्दी की उच्च शिक्षा के लिए छात्रवृत्ति दी जाती है। नौकरी में भी हिन्दी जाननेवालों को वरीयता मिलती है।

रामचरितमानस के राम उनके आराध्य हैं और हनुमान चालीसा के हनुमान फ्रेंच उपनिवेश के अत्याचार से मुक्ति दिलाने वाले देवता हैं जिनकी प्रतिमा उनके परम पूज्य हैं।

स्मृति-शेष

श्यामाप्रसाद 'प्रदीप'

स्वतंत्रता-आन्दोलन के प्रखर पत्रकार और उत्तर प्रदेश-विधान परिषद के पूर्व सदस्य श्यामाप्रसाद 'प्रदीप' का 14 जनवरी को लम्बी बीमारी के बाद उनके पैतृगाँव मवई खुर्द (फैजाबाद) में निधन हो गया। 14 अगस्त 1926 को उनका जन्म रंगून (वर्मा) में हुआ था।

आपातकाल में जयप्रकाश नारायण के आन्दोलन के प्रबल समर्थक होने के कारण गिरफ्तार किये गये। वे 19 महीने जेल में रहे। अध्ययन और नौकरी साथ-साथ करते रहे। 1948 से वे पत्रकारिता से सक्रिय रूप से जुड़े और जय हिन्द, आज, भारत आदि पत्रों में कार्यरत रहे। उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पत्रकारिता विभाग में मानद अध्यापक के रूप में कार्य किया।

शरणबिहारी गोस्वामी

वृन्दावन के स्नातकोत्तर महाविद्यालय के पूर्व प्राचार्य और उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के पूर्व कार्यकारी उपाध्यक्ष शरणबिहारी गोस्वामी का गत मास अपोलो अस्पताल, दिल्ली में देहान्त हो गया। वे 74 वर्ष के थे। वे भक्ति-साहित्य के मर्मज्ञ व्याख्याता थे। उन्होंने मध्ययुगीन साहित्य पर गम्भीर अध्येता के रूप में दृष्टिनिक्षेप किया था। स्वामी हरिदास और स्वामी हितहरिवंश पर उनके ग्रन्थ साहित्य-जगत के लिए प्रशंसनीय उपहार माने जाते हैं। भारतीयता से ओतप्रोत उन्होंने बच्चों के लिए अनेक पाठ्य-पुस्तकें लिखी थीं। ऐसे त्यागी और समर्पित साहित्यकार के निधन से जो रिक्तता आयी है, उसकी पूर्ति में समय लगता है।

आपका पत्र

'भारतीय वाङ्मय' का जब भी नया अंक आता है, उस छोटी पत्रिका में बहुत कुछ जानने को मिल जाता है। आपकी लघु पत्रिका में एक दृष्टि है। पिछले अंक में पुस्तक-संस्कृति के सम्बन्ध में संक्षेप में अच्छी जानकारी मिल गई।

मेरा स्वास्थ्य तो आयु के साथ-साथ चलता है। मजदूर हूँ इसलिए रोज काम करना ही पड़ता है।

आपके सम्पादकीय से पता लगा कि पाकिस्तान अपने देश में सरस्वती की खोज कर रहा है। काश! वह उसे पा सके.....। **— विष्णु प्रभाकर**

बी-151, महाराना प्रताप एन्क्लेव
पीतमपुरा, दिल्ली-34

'छप्पन वर्षों की हताशा' शीर्षक आपकी टिप्पणी सामयिक, भाषिक समस्या से सम्बद्ध होने के कारण अपना प्रासंगिक मूल्य रखती है। 'भाषा सभ्यता का शास्त्र है और शस्त्र भी' आपकी यह सूक्ति-मूलक उक्ति महार्थ है। इसमें चिन्तन के कई आयाम व्यंजित हैं। सचमुच हिन्दी आज 'हिंग्रेजी' तो बन ही रही है, व्याकरण की दृष्टि से भी भ्रष्ट होती जा रही है। अज्ञतावश अशुद्ध भाषा के प्रयोक्ता न केवल 'स्नातक' अपितु 'स्नातकोत्तर' भी हैं, साथ ही पी-एच०डी० की डिग्री के धारक भी।

— डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव, पटना

'भारतीय वाङ्मय' में पुस्तक प्रकाशन के समाचारों से लेकर पुरस्कार सम्मान की नवीनतम जानकारी देकर पाठकों का बहुत बड़ा उपकार कर रहे हैं। पाठकों और पुस्तकों के बीच सार्थक संवाद स्थापित कर आप एक बहुत बड़ी कमी की भरपाई कर रहे हैं। 'स्मृति-शेष' और 'विशिष्ट पत्र' स्तम्भ ने पत्रिका को ऐतिहासिक महत्व का बना दिया है। पुस्तक-समीक्षा और सम्पादकीय 'भारतीय वाङ्मय' को एक सम्पूर्ण पत्रिका का गौरव प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

—अनिरुद्धप्रसाद विमल, बाँका (बिहार)

पिछले छप्पन वर्षों में केवल भारतीय भाषाओं को दूसरे दरजे की भाषा नहीं बनाया बल्कि हमारे संस्कार और संस्कृति पर भी बहुत बड़ा आघात हुआ है। हिमाचल प्रदेश ही नहीं प्राय: सभी राज्यों के स्कूलों में पहली कक्षा से अंग्रेजी पढ़ाई जा रही है। अब सरकार स्कूलों में अंग्रेजी की पढ़ाई तक सीमित न रह कर पाश्चात्य पहनावा जैसे स्कर्ट और टाई लगाना भी आवश्यक करती जा रही है चाहे वे लड़के हो या लड़कियाँ। यह हमारी मानसिक दासता का परिचायक है। अंग्रेजी माध्यम आवश्यक होने पर, अंकुश लगा पाना कठिन प्रतीत होता है। इस दिशा में सही और सकारात्मक सोच की आवश्यकता है।

— सुखपाल गुप्त, नई दिल्ली

इस अठपेजी अष्टावक्री का अपना ही अन्दाज है। महत्त्वपूर्ण को अपने में समेटे, समाहित किये। 'भारतीय वाङ्मय' की एक सुघड़ प्रस्तुति! बधाई!!

— निशा, दिल्ली

हमारा अपना इतिहास है

आजादी की लड़ाई में हिन्दी की कितनी भागीदारी रही है, यह उजागरी तथ्य आज उतना ही प्रासंगिक है जितना आजादी से पहले। 10 दिसम्बर 1946 को संविधान-सभा की बैठक शुरू हुई। सभी के सामने कई विवादास्पद प्रश्न थे, राज्यों की संघबद्धता, अल्पसंख्यकों के अधिकार और नजरबंदी कानून। राष्ट्रभाषा का प्रश्न भी सामने था।

बैठक में उत्तर प्रदेश के प्रतिनिधि आर०वी० धुलेकर एक संशोधन पेश करते हुए जब हिन्दुस्तानी में अपने विचार व्यक्त करने लगे तब सभाध्यक्ष ने टोकते हुए उनसे कहा कि इस सभा के अनेक सदस्य आपकी भाषा नहीं समझते। धुलेकरजी ने कहा—जो लोग हिन्दुस्तानी नहीं जानते उन्हें भारत में रहने का हक नहीं है। इस सदन में जो लोग भारत के लिए संविधान तैयार करने के लिए मौजूद हैं, और हिन्दुस्तानी नहीं जानते, वे इस सभा के सदस्य-योग्य नहीं हैं।

इस कटु उक्ति ने सदन में खलबली मचा दी। सभाध्यक्ष बार-बार 'शान्त रहिये' कहते रहे। तब धुलेकरजी ने संशोधन पेश किया कि कार्यवाही समिति को अंग्रेजी में नहीं, हिन्दी में नियमोपनियम बनाने चाहिए। भारतीय होने के नाते मैं सादर अनुरोध करता हूँ कि हमलोगों ने संघर्षगत होकर आजादी हासिल करने के लिए कुर्बानी दी है। आपको सोचना चाहिए और अपनी भाषा में विचार रखना चाहिए। हमलोग हमेशा अमेरिका, जापान, जर्मनी, स्वीट्जरलैण्ड और ब्रिटिश हाउस ऑफ कामन्स की बातें करते रहते हैं। यह मेरे लिए सरदर्द है। मुझे ताज्जुब होता है कि हम भारतीय अपनी भाषा में क्यों नहीं बोलते। भारतीय होने के नाते मैं महसूस करता हूँ कि इस सदन की कार्यवाहियाँ हिन्दुस्तानी में चलायी जाएँ। दुनिया के तबारीख से हमें क्या लेना-देना। सहस्राब्दियों से हमारे देश के करोड़ों देशवासियों का अपना इतिहास है।

प्रतिक्रियाएँ

अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दू' के 18 जनवरी के अंक में 'हिन्दी : अन्ध देशभक्ति' शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ था। उसका थोड़ा-सा अंश ऊपर दिया गया है। प्रतिक्रियास्वरूप 20 और 23 जनवरी को 'हिन्दू' में सम्पादक के नाम पत्र छपे। पहले पत्र में मिशिगन (अमेरिका) के वरुण व्यंकटेश्वरम् का कहना है कि कुछ लोग हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए बार-बार आग्रह करते हैं, क्यों? उनका तर्क है कि सामान्य भाषा होने से हिन्दी राष्ट्रीय एकता के लिए उत्तमोतम है। दूसरी बात, हिन्दी बहु-प्रचलित भाषा है। इसलिए राष्ट्रभाषा के लिए सर्वोपरि पसन्दगी है। यह बेतुकी बात है। क्या एकता के निमित्त हम भारत को हिन्दू राष्ट्र बना सकते हैं?

दूसरा पत्र (23 जनवरी) तिरुवनंदपुरम् के सुवैया व्यंकटरमण का है। उनका कहना है कि जो विषय बहुत पहले असंगत हो चुका, उसके लिए क्यों माथापच्ची करते हैं? भाषा-विज्ञान में जिनकी अभिरुचि है, उनके फायदे के लिए प्राचीन एवं आधुनिक क्लासिक के रूप में भाषाएँ हमेशा रहेंगी ही, लेकिन यथार्थ यह है कि खिचड़ी भाषा को राष्ट्रभाषा का रूप दिया गया है। इस भाषा में व्याकरण और शब्द-भण्डार की न्यूनता है। व्यापार या पत्राचार में इसका अनाप शनाप प्रयोग देखने में आता है। दूरदर्शन भी ऐसा ही इस्तेमाल कर रहा है।

सभी धर्म सुषमामय उद्यान के समान हैं। किन्तु, वे द्वीप की तरह अलग-अलग हैं। यदि आगत सहस्राब्दि के लिए 'समन्वय-परियोजना' के अन्तर्गत, प्रेम और करुणा के साथ, उन पृथक-पृथक टापुओं का हम एक-दूसरे से रिश्ता जोड़ सकते हैं तो हमारा भारत समृद्ध और महान हो जाएगा। **—ए०पी०जे० अब्दुल कलाम**
राष्ट्रपति

समाचार

मैथिली को मान्यता

भारत सरकार ने मैथिलीवासियों की माँग पर संविधान की आठवीं अनुसूची में मैथिली भाषा को सम्मिलित कर लिया है। अब यह माँग की जा रही है कि बिहार के विश्वविद्यालयों में मैथिली का एक भाषा के रूप में अध्यापन किया जाय और उसके लिए अध्यापक नियुक्त किये जायँ। बिहार पब्लिक सर्विस कमीशन की परीक्षाओं में भी इसे मान्यता दी जाय।

मैथिली के साथ बोडो, संथाली तथा डोगरी भाषाओं को भी संविधान की आठवीं सूची में सम्मिलित कर लिया गया है।

बिहार की अन्य भाषा

बिहार की अन्य बोलियों/भाषाओं को भी आठवीं अनुसूची में सम्मिलित किये जाने की माँग भी शुरू हो सकती है। इनमें मगध की मगही, भागलपुर की अंगिका और वैशाली की वज्जिका भाषा मुख्य रूप से है। चुनाव का समय है, जो चाहो माँग लो।

भोजपुरी को मान्यता नहीं

भोजपुरी जो बहुत बड़े क्षेत्र की भाषा है, जिसका साहित्य भी महत्त्वपूर्ण है आठवीं अनुसूची में सम्मिलित नहीं किये जाने से लोगों में असंतोष है।

भोजपुरी

शब्दों में विद्वता, शौर्य और राष्ट्रप्रेम के लिए सुप्रसिद्ध भोजपुरी क्षेत्र की लोकभाषा की अपनी एक विशिष्टता है। देश के बाहर भी अनेक देशों में भोजपुरी बहुत लोकप्रिय है।

—अटलबिहारी वाजपेयी

भोजपुरी भाषा की यह विशेषता है कि वह मानवीय भावों को सीधे-सपाट शब्दों में सरल और सहज अभिव्यक्ति करती है जो हिन्दी वालों को भावविभोर कर देती है।

—डॉ० के०आर० नारायणन

भोजपुरी कई करोड़ लोगन क आशा-आकांक्षा के प्रगट करेवाला सशक्त धन बा। गाँव-गाँव अवरू घर-घर में नया आर्थिक आ सामाजिक कार्यक्रम अवरू होकर दूरगामी प्रभाव समझावे खातिर भोजपुरी के सहारा लिहल बहुत जरूरी बा।

—आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

भोजपुरी साहित्य जितना मधुर है उतना हृदयस्पर्शी भी। **—रामकुमार वर्मा**

हिन्दी के बाद भोजपुरी ऐसी बोली है जो भारत के बाहर दूसरे देशों में भी बोली जाती है।

—देवकांत बरुआ

भोजपुरी संसार की सबसे सुन्दर भाषा है।

—जयचंद विद्यालंकार

भोजपुरी सशक्त लोकभाषा है।

—महादेवी वर्मा

राष्ट्रीय संगोष्ठी

महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ में 17-18 जनवरी 2004 को 'वर्तमान हिन्दी आलोचना : दशा और दिशा' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी हुई जिसमें प्रो० राममूर्ति त्रिपाठी, प्रो० शुकदेव सिंह, प्रो० सत्यप्रकाश मिश्र, डॉ० वीरेन्द्र यादव, डॉ० पी०एन० सिंह, डॉ० नीलाभ, डॉ० अवधेश प्रधान, डॉ० रामकमल राय, डॉ० बच्चन सिंह, विवेकी राय प्रभृति विद्वानों ने भाग लिया।

'पुनश्च' का लोकार्पण

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री विष्णुकान्त शास्त्री ने राजभवन भोपाल में मेहरुन्निसा परवेज की पुस्तक 'पुनश्च' का लोकार्पण किया।

बाल साहित्य का लोकार्पण

उपराष्ट्रपति भैरो सिंह शेखावत ने संजीव गुप्ता की पुस्तक 'बच्चों के कारनामे' का लोकार्पण करते हुए कहा—बच्चों में यह आत्मविश्वास पैदा करने वाला बाल साहित्य लिखा जाना चाहिए कि गरीबी और अशिक्षा अभिशाप नहीं है। इससे मुक्ति पाकर हम आगे बढ़ सकते हैं।

दादी माँ से कहानियाँ सुनकर बच्चों में जो संस्कार बनते हैं, वे जीवनभर चलते हैं। पारिवारिक परिवेश बच्चों के संस्कारों पर बहुत प्रभाव डालते हैं।

सफ़िया अख़्तर की किताब 'तुम्हारे नाम' का लोकार्पण

उर्दू के मशहूर शायर स्वर्गीय जाँनिसार अख़्तर के लिखे गए पत्रों के संकलन 'तुम्हारे नाम' का लोकार्पण 2 जनवरी, 2004 को ग़ालिब इंस्टीट्यूट में मशहूर अभिनेत्री शबाना आज़मी ने किया। उन्होंने पुस्तक में संकलित कुछ पत्रों का पाठ भी किया। उन्होंने पुस्तक की पहली कृति सफ़िया अख़्तर की बहन हमीदा सालिम को भेंट की।

राजकमल द्वारा प्रकाशित इस दुर्लभ पुस्तक के लोकार्पण के अवसर पर मौजूद विशिष्ट लोगों में गीतकार जावेद अख़्तर और उनके भाई सलमान अख़्तर, हमीदा सालिम, मैत्रेयी पुष्पा, अनामिका आदि भी थे। मूल उर्दू से इस किताब का लिप्यांतरण प्रसिद्ध नाटककार और कथाकार असग़र वजाहत ने किया है। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि यह सिर्फ ख़तों का संकलन नहीं है भाषा और कथ्य के लिहाज पर यह एक सम्पूर्ण कलाकृति है।

भंडारकर प्राच्य अनुसंधान संस्थान, पूना में बर्बरतापूर्ण कृत्य

अमेरिका के धर्म इतिहासकार जेम्स लेन की पुस्तक **शिवाजी : हिन्दू किंग इन इस्लामिक इण्डिया** भारत में प्रकाशित हुई। पुस्तक में लेखक ने भंडारकर प्राच्य अनुसंधान संस्थान के एक विद्वान श्रीकांत बहुलकर की बौद्धिक सहायता के प्रति आभार व्यक्त किया।

इससे कुपित होकर महाराष्ट्र के कट्टरवादी साम्प्रदायिक संगठन शिवसेना के संभाजी ब्रिगेड ने बहुलकरजी के मुँह पर कालिख पोती और भंडारकर प्राच्य अनुसंधान संस्थान जो इतिहास, पुरातत्त्व और दुर्लभ पाण्डुलिपियों के लिए विश्व में विख्यात है, तोड़-फोड़ की, पुस्तकालय के दुर्लभ ग्रन्थों और पाण्डुलिपियों को नष्ट किया। संस्थान देश की बौद्धिक सम्पदा का संरक्षक है, ऐसे संरक्षण को नष्ट करना सरासर बर्बरता है, क्या देश के इतिहास को नष्ट कर बर्बरता युग में ले जाना चाहते हैं। वैचारिक भिन्नता, असहमता को प्रगट करने का यह तरीका नहीं है। तर्क से तर्क को परास्त कीजिए। इस बर्बरता की बौद्धिक प्रतिक्रिया स्वरूप मराठी के प्रसिद्ध इतिहासकार गजानन मेहेंरले ने क्षुब्ध होकर शिवाजी से सम्बन्धित अपनी पुस्तक की पाण्डुलिपि फाड़ दी इस घोषणा के साथ कि यहाँ कोई विद्वत्तापूर्ण लेखन पढ़नेवाला नहीं है।

शिवसेना के आततायी वाहनों पर सवार होकर भंडारकर प्राच्य अनुसंधान संस्थान, पूना में आए। उनमें से सत्तर लोग सूमो पर सवार थे। आते ही इन्होंने संस्थान की इमारत पर ईंट-पत्थर बरसाना आरम्भ कर दिया फिर भवन में घुसकर वहाँ की टेलीफोन लाइनें काट दीं, मेज-कुर्सियाँ तोड़ दीं, कर्मचारियों को अपमानित किया, और अलमारियों और खिड़कियों के शीशे तोड़ डाले। पचास अलमारियों में रखी हुई तीस हजार पांडुलिपियों के साथ हजारों दुर्लभ पुस्तकों को नष्ट कर दिया। इन पांडुलिपियों में अनेक बहुत प्राचीन थीं जो ताड़पत्र और भोजपत्र पर थीं। आज से 76 वर्ष पूर्व जब रामकृष्ण गोपाल भंडारकर के सम्मान में इस संस्थान की स्थापना हुई थी, उस समय बम्बई सरकार ने ही इसे बीस हजार पांडुलिपियाँ सौंपी थीं। पांडुलिपियों और दुर्लभ ग्रन्थों के अतिरिक्त उपद्रवकारियों ने बहुत से दुर्लभ चित्रों और कलावस्तुओं को भी नष्ट कर दिया या लूट कर अपने साथ ले गए। जिन कम्प्यूटरों में ग्रन्थों को डिजिटल कोड से सुरक्षित किया गया था, उनको भी तोड़-फोड़ दिया गया।

प्राचीन पांडुलिपियों और पुस्तकों में शताब्दियों का इतिहास और ज्ञान होता है, जो आने वाली पीढ़ियों का मार्गदर्शक होता है। ये हमारी बौद्धिक धरोहर हैं।

पूना का यह संस्थान बौद्धयुगीन नालन्दा के पुस्तकालय का स्मरण कराता है जिसके नष्ट होने का पश्चाताप हम अब तक झेल रहे हैं। शताब्दियों से हमारी सभ्यता का कोई विकास नहीं हुआ? क्या हम पुनः बर्बर युग में आ गये हैं?

नरेन्द्र मोहन की डायरी मराठी में

नरेन्द्र मोहन की डायरी आत्म मुक्त क्षणों का साक्षात्कार है। इसमें विभाजन की घुटन, विस्थापितों का दुःख-दर्द, आपात-काल और चौरासी के दंगों की त्रासदी इतनी मार्मिकता से गुथी हुई है कि इतिहास में से आत्म-प्रसंग और आत्म प्रसंग में से इतिहास झाँकने लगता है। यहाँ इतिहास की घटनाएँ बिम्बों-प्रतिबिम्बों के रूप में लेखकीय मनस् में से झन कर शब्दबद्ध होती

गई हैं। अनुवाद भी मूल सृजन को पकड़ने वाला है। लगता है, नरेन्द्र मोहन ने यह डायरी खुद मराठी में लिखी हो। ये शब्द हैं मराठी के प्रसिद्ध साहित्यकार, आलोचक डॉ० गंगाधर पानतावने के जो उन्होंने नरेन्द्र मोहन की डायरी 'साथ-साथ मेरा साया' के मराठी अनुवाद 'सावली माझ्या सवे' (अनु० डॉ० मंगला वैष्णव) का लोकार्पण करते हुए कहे।

—डॉ० गणेशराज सोनाले

विवादास्पद 'द्विखंडितो' हिन्दी में

एक ओर जहाँ बांग्लादेश की विवादास्पद लेखिका तसलीमा नसरीन की आत्मकथा 'द्विखण्डितो' ने पश्चिम बंगाल के साहित्य जगत में भूचाल खड़ा कर दिया है वहीं इसके हिन्दी अनुवाद का दिल्ली में लोकार्पण है।

तसलीमा की 'द्विखण्डितो' उनकी आत्मकथा की तीसरी कड़ी है। प्रथम दो कड़ियों के नाम 'आमार मेयेबेला' व 'सेई सब अंधकार' हैं।

डॉ० आनन्दवर्धन
सोफिया विश्वविद्यालय में विज़िटिंग प्रोफेसर

उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान (भोपाल) के सहायक प्रोफेसर डॉ० आनन्दवर्धन की बुल्गारिया स्थित सोफिया विश्वविद्यालय (सोफिया) में विज़िटिंग एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी) के रूप में नियुक्ति हुई है। भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद (नई दिल्ली) के द्वारा यह नियुक्ति दो वर्ष के लिए हुई है। उन्होंने अपना कार्यभार ग्रहण कर लिया है। कवि, कहानीकार और निबन्धकार तथा रंगकर्मी डॉ० आनन्दवर्धन प्रसिद्ध बाल साहित्यकार डॉ० श्रीप्रसाद के आत्मज हैं। डॉ० आनन्द की कविताएँ, कहानियाँ और लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। हाल ही में प्रोफेसर चन्द्रबली सिंह और अशोक पाठक के सम्पादन में प्रकाशित 'रेत में बहता जल' में आपकी कविताएँ संकलित की गई हैं।

साहित्यकार क्या लिख रहे हैं

आम पाठकों का हिन्दी साहित्य से सम्मान दिन-प्रतिदिन घटता जा रहा है। एक जमाने में हिन्दी और उर्दू को सेक्यूलरवादी माना जाता था, लेकिन इस क्षेत्र में लेखकों के बीच द्वन्द्व होने के कारण हिन्दी साहित्य की प्रासंगिकता पर संकट छा गया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'कविता क्या है ?' नामक निबन्ध में लिखा था कि जैसे-जैसे सभ्यता का विकास होगा कवि कर्म जटिल होता जायगा। वह दिख भी रहा है। मध्यमवर्गीय परिवार हिन्दी साहित्य की पुस्तकों को बहुत कम पढ़ रहा है। आजकल साहित्यकार हत्याओं, बलात्कार और अपराध के व्यावसायिक इस्तेमाल के लिए साहित्य लिख रहे हैं। **— डॉ० शिवकुमार मिश्र**

कबीर की सार्वभौम अपील

सदानन्द शाही

हाइडेलबर्ग विश्वविद्यालय के साउथ एशिया संस्थान के आमन्त्रण पर 'पश्चिम में कबीर का अधिग्रहण' विषय पर कार्य करने के लिए जर्मनी जाना हुआ। इस प्रवास में कबीर पर कार्य करने वाले योरप के कुछ विद्वानों से भेंट का अवसर मिला। कबीर में पश्चिम के विद्वानों की रुचि के अनेक आयाम थे। कहने की जरूरत नहीं कि योरप के जो विद्वान कबीर का अध्ययन करते हैं वे प्राय: भारत विद्या के प्रति आकर्षित रहे हैं। एक सर्वथा भिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के होने के बावजूद पश्चिम के विद्वानों को कबीर की कविता में सार्वजनीनता दिखायी देती है। साउथ एशिया संस्थान हाइडेल बर्ग में मॉडर्न इन्डोलॉजी की प्रोफेसर और संत साहित्य की अध्येता प्रो० मोनिका बोहेम टेटिल बाख ने कबीर की छ: सौवीं जयन्ती पर कबीर पर एक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की थी। संगोष्ठी में भारत सहित दुनिया भर से कबीर पर कार्य करने वाले विद्वान शामिल हुए थे। प्रो० मोनिका के सम्पादन में Images of Kabir शीर्षक से एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुस्तक भी प्रकाशित हुई है। प्रो० मोनिका को कबीर इसलिए आकृष्ट करते हैं क्योंकि उनमें समाज के सामने सत्य को प्रकट और प्रतिस्थापित करने की असाधारण हिम्मत थी। मुझे बर्लिन के हम्बोल्ट विश्वविद्यालय के इण्डोजर्मन रिलेशन के प्रो० जोखिम वुस्टरहेल्ड ने अपने विद्यार्थियों के बीच कबीर के बारे में व्याख्यान के लिए बुलाया। व्याख्यान के बाद जब छात्रों और अध्यापकों ने सवाल करना शुरू किया तो कबीर के बारे में उनकी जानकारी और जिज्ञासाओं से मैं दंग रह गया। वहाँ ऐसे विद्यार्थी थे जिन्हें कबीर के जन्म की प्रचलित कथा विश्वसनीय नहीं लगती। वे रवीन्द्रनाथ टैगोर के अंग्रेजी अनुवाद के माध्यम से कबीर को पढ़ चुके थे। कई ऐसे विद्यार्थी भी थे जिन्हें कबीर की कविताएँ प्रेम कविताएँ जान पड़ती हैं। लम्बे समय तक भारत में रह चुके जर्मन विद्वान प्रो० लोठार लुत्से से अत्यन्त भावुक और आत्मीय मुलाकात हुई। भारत की स्मृति उनके एकाकी घर में रखे तीन तबलों और उनके तबलावादक मित्र चतुरलालजी की तस्वीर के रूप में विद्यमान थी।

प्रो० लुत्से ने हाल ही में 'मैंने अपना घर जला लिया है' शीर्षक से कबीर की कविताओं का जर्मन अनुवाद किया है। इस अनुवाद की खासियत यह है कि कविता की लय और संगीतात्मकता बनी हुई है। प्रो० लुत्से का मानना है कि इस तरह कविता जुबान पर चढ़ जाती है। प्रो० लुत्से कबीर को समकालीन विश्व मानवता का भाई मानते हैं। उन्हें कबीर की कविताओं में समकालीन दुनिया के सामने उपस्थित अनेक चुनौतियों के उत्तर भी मिलते हैं।

जब पेरिस के कालेज डे फ्रांस की प्रो० फ्रैन्सोइस मैलिसन से व्याख्यान का न्यौता मिला तो मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। अन्य अनेक कारणों के अलावा इसलिए भी कि यह शार्लेट वोदविले की कर्मभूमि थी। शार्लेट वोदविले ने कबीर सम्बन्धी शोध और अध्ययन तथा कबीर की कविताओं के अनुवाद में सारा जीवन लगा दिया था। कहा जा सकता है कि पश्चिम में कबीर सम्बन्धी अध्ययन की नयी धारा को प्रो० वोदविले के अध्ययन अनुसंधान से प्रेरणा और शक्ति दोनों प्राप्त होती है। प्रो० फ्रेन्सोइस मैलिसन उन्हीं शार्लेट वोदविले की शिष्या हैं वहाँ मेरी भेंट प्रो० फ्रांस भट्टाचार्य जैसी विदुषी से भी हुई जिन्हें इस बात की शिकायत थी कि भारत में कबीर का अध्ययन करते हुए उन्हें ठेठ हिन्दू परम्परा का सिद्ध करने की कोशिश दिखायी देती है। मेरे मित्र और तमिल के प्रो० मुरूगयन मुझे पुस्तकालय दिखाने ले गये वहाँ उन्होंने पुस्तकालयाध्यक्ष जो एक प्रौढ़ महिला थी से मिलवाया। उन्हें पता था कि मैं कबीर पर व्याख्यान देने आया हूँ। उन्होंने मुझसे कहा कि कबीर मुझे बहुत प्रिय हैं। वे कार्यालय की जिम्मेदारी के नाते व्याख्यान में उपस्थित नहीं हो पा रही हैं इसका उन्हें बेहद अफसोस है। उन्होंने प्रो० मुरूगयन से अत्यन्त आग्रहपूर्वक कहा कि व्याख्यान का कैसेट उन्हें अवश्य दिया जाय। वहाँ मुझे ओडिले बुसेल जैसी अत्यनत भावुक और कवि हृदय महिला से भी भेंट हुई। वे भी वोदविले की शिष्या रही थीं। उन्होंने छूटते ही मुझसे पूछा—क्या आप भी रहस्यवादी कवि हैं। मेरे यह कहने पर कि कवि हूँ पर रहस्यवादी नहीं। इस पर उन्होंने कहा—'पर कबीर तो रहस्यवादी थे।' वे कबीर के रहस्य और प्रेम की मुरीद थीं। केवल इस नाते उन्होंने मुझे जो स्नेह और आतिथ्य दिया वह विलक्षण था।

पूरे प्रवास के दौरान मुझे एक हफ्ते इटली के तुरीनो में रहना था। तुरीनो विश्वविद्यालय की प्रो० पिनूशिया कराकी ने बहुत पहले ही काव्यपाठ और 'कबीर : पूरब और पश्चिम के मिलन बिन्दु' विषय पर व्याख्यान के लिए आमंत्रित कर रखा था। यहाँ मुझे छात्रों और अध्यापकों दोनों से ही घुलने-मिलने का अवसर मिला। इसमें प्रो० पियानो जैसे प्रसिद्ध विद्वान भी थे तो इमानुएला जैसी प्रबुद्ध और उत्साही छात्रा भी थी।

इटली के लोगों को इस बात का गर्व था कि योरप में कबीर पर काम करने वाला पहला व्यक्ति मार्कोडेला टोम्बा इटैलियन था। वहाँ मैंने पाया कि कबीर का सीधे इटैलियन में अनुवाद है पर एजरापाउण्ड और कालीमोहन घोष द्वारा किए गये कबीर के अनुवाद का इटैलियन अनुवाद ज्यादा प्रचलित है और पसन्द किया जाता है।

कबीर की कविता के मेरे जैसे साधारण विद्यार्थी के लिए कबीर की इस सार्वभौम अपील से परिचित होना आश्चर्य और प्रसन्नता देनेवाली है।

लेखन, विमोचन, लोकार्पण

जो साहित्यकार स्वयं संवेदनशील नहीं है, जो जीवन के विभिन्न स्तरों को मानव-सहानुभूति से पूर्ण हृदय से देखने में असमर्थ है, वह भले ही विदेशी या स्वदेशी कृतियों से अपने ज्ञान का सिक्का जमाने की चेष्टा क्यों न करे, साहित्यिक क्षेत्र में धीरे-धीरे घुस आई सांस्कृतिक शून्यता को दूर नहीं कर सकता। यही कारण है कि आज के साहित्यिक क्षेत्र में गर्जन-तर्जन तो बहुत बढ़ गया है, पर साहित्यकार बेचारा कहीं खो गया है! ऐसे में कोई क्या लिखे और किसके लिए लिखे? आएदिन कुकुरमुत्ते से उग आए लेखकों की पुस्तकों का विमोचन, लोकार्पण आम बात बन गई है। जितनी लम्बी पहुँच उतने ही महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के कर-कमलों द्वारा पुस्तक का विमोचन! मैं तो सोचती हूँ कि पुस्तक का विमोचन तो उसी दिन हो जाता है जिस दिन लेखक उसे पूरा करता है।

वास्तविक साहित्यिक दुनिया में क्या हो रहा है, क्या इस ओर भी किसी का ध्यान जाता है? आज आप किसी भी हिन्दी पत्रिका को उठा लीजिए, शायद ही कोई ठोस रचना आपका मन बाँध सकेगी! व्यर्थ की दलबंदियाँ, एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप, गाली-गलौज या फिर अश्लीलता की परिधि को भी कब का छोड़ चुकी वंध्या कुवाक्यों से बोझिल भाषा। साफ-सुथरी, अच्छी हिन्दी लिखना तो हम भूलते ही जा रहे हैं। ऐसी रचनाएँ लिखना, जो दृढ़चेता, आदर्श चरित्रों की सृष्टि कर सुदीर्घकाल तक मनुष्य को मनुष्यता का मार्ग दिखा सकें, क्या इस युग में समर्थ-से-समर्थ साहित्यकार के लिए सम्भव हो पाएगा? जहाँ जघन्य अपराधी कानून को भी अपना सशक्त अँगूठा दिखा अब मंत्री-पद सुशोभित कर सकते हैं, जहाँ घर्षिता, असहाय नारियों की गुहार सुनने का किसी को समय नहीं है, वहाँ कलम उठाने की सामर्थ्य कितने साहित्यकारों में रह गई है? यदि कोई ऐसा दुस्साहस करता भी है तो किसी-न-किसी रूप में उसे दण्ड भोगना ही पड़ता है। जनसाधारण की रुचि को देखकर ही क्षणिक साधुवाद पाने के लिए हम उसी स्तर की परिवेशना करें तो उसे कभी ऊँचा उठने की प्रेरणा नहीं मिलेगी।

हमें स्मरण रखना चाहिए कि हमारा अतीत अब पूर्णतया विलुप्त हो चुका है। जिन्होंने वह युग देखा ही न हो, उन्हें यह सब सुनाकर क्या लाभ!

हमें भी आज यही सीखना है कि एक बार घोंसले में जन्मे-पले पक्षी भी पर उगते ही फुर्र से निस्सीम गगन में उड़ जाते हैं—घोंसले में क्या कभी लौटते हैं?

इसी को ध्यान में रख हमें साहित्य साधना में भी संलग्न होना चाहिए; केवल कबीर, जायसी, तुलसीदास के दिए गए मूलधन को ही छाती से चिपकाकर हम कदापि कुछ नया नहीं दे पाएँगे। हम बार-बार यही सोचें कि हमने स्वयं उस मूलधन में कितना जोड़ा है। हिन्दी की ऐसी शोचनीय अवस्था इतिपूर्व कभी नहीं हुई। और दोषी हम स्वयं हिन्दीवाले हैं।

जो अपनी भाषा में बोलने-पढ़ने या लिखने में लज्जा-बोध करे, उससे अभागा और कौन होगा!

— शिवानी

शिक्षाशास्त्रविद् प्रोफेसर के०पी० पाण्डेय

पैंसठ वर्षीय प्रो० **कामताप्रसाद पाण्डेय** शिक्षाशास्त्र के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान हैं। सर्वदा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण डॉ० के०पी० पाण्डेय ने पी-एच०डी० (शिक्षाशास्त्र) एवं अध्यापक शिक्षा में सर्टिफिकेट ऑफ मेरिट संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के मिशीगन विश्वविद्यालय से फुलब्राइट एवार्ड के साथ सन् 1968 में पूरा किया। इनके शोध का विषय टीचिंग एप्टिट्यूड, शिक्षण व्यवहार तथा अभिक्रमित अधिगम की तकनालॉजी है। ये इण्डियन काउन्सिल ऑफ मैनेजमेन्ट इक्जिक्यूटिव (मुम्बई) के समाज-श्री सम्मान (1993), विश्वविद्यालय अनुदान आयोग दिल्ली के राष्ट्रीय-व्याख्याता सम्मान, बेस्ट सिटीजन ऑफ इण्डिया अवार्ड (2002) के आदाता तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के एमेरिटस फेलो के पद से सम्मानित हं। सम्प्रति ये सोसाइटी फॉर एजुकेशन एण्ड प्रैक्टिकल एप्लिकेशन (शेपा), वाराणसी के निदेशक तथा यूनेस्को के शैक्षिक प्रशासन (यू०पी० चैप्टर) के अध्यक्ष हैं।

प्रोफेसर पाण्डेय ने 31 वर्ष की आयु में ही शिक्षाशास्त्र विषय के आचार्य पद पर रहते हुए मेरठ विश्वविद्यालय (सम्प्रति चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ), हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला तथा महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी के शिक्षा संकायों में संस्थापक विभागाध्यक्ष एवं डीन के गुरूतर दायित्वों का निर्वहन अत्यन्त सूझबूझ एवं कुशलतापूर्वक सम्पन्न किया है। इन्हें हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय में व्यवहार विज्ञान के अन्तर्विद्यापरक विभाग के संस्थापक अध्यक्ष (5 वर्ष), दूरवर्ती शिक्षा के निदेशालय (अन्तर्राष्ट्रीय दूरवर्ती शिक्षण-अधिगम निदेशालय) के संस्थापक निदेशक (22 वर्ष) एवं मेरठ विश्वविद्यालय के दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय के भी संस्थापक निदेशक (3 वर्ष) रहने का श्रेय प्राप्त है। महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ के शिक्षा संकाय को सेन्टर फॉर एक्सिलेन्स का दर्जा दिलाने तथा वहाँ के शिक्षा विभाग में इस केन्द्र के समन्वयक का पद सम्भालने तथा इसी विश्वविद्यालय में कुलपति के पद को सुशोभित करने का गौरव भी इन्हें मिला है।

ये शिक्षाशास्त्र विषय के मूर्धन्य विद्वान एवं यशस्वी लेखक हैं अब तक इनकी 25 रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं जिन्हें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के मानक एवं समर्थन उपलब्ध हैं। इनकी रचनाधर्मिता की परिधि में प्रमुख रूप से शिक्षा मनोविज्ञान, शिक्षा दर्शन, शैक्षिक अनुसन्धान, शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी, शैक्षिक प्रौद्योगिकी, शिक्षण एवं अधिगम का मनोविज्ञान, शिक्षण-व्यवहार एवं अभिक्रमित अधिगम की तकनालॉजी, पर्यावरण शिक्षा तथा द्वितीय भाषा के रूप में अंग्रेजी एवं हिन्दी शिक्षण विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

साक्षरता-अभियान का नया प्रयोग

समाज की अनेक कुरीतियों के उन्मूलन के लिए साक्षरता को आधारभूत साधन मानकर नयी-नयी परियोजनाएँ यत्र-तत्र लागू की जा रही हैं। मेक्सिको में इस प्रकार का कार्यक्रम भू-गर्भ रेलवे में सफर करनेवालों के लिए शुरू किया जा रहा है। इसका उद्देश्य है कि अपराध की प्रवृत्तियाँ कम कर लाखों व्यक्तियों की जीवन-पद्धति सन्तुलित बनायी जाय। परियोजना का स्वरूप है कि दो वर्षों में मेट्रो भूगर्भ रेलवे के लिए सत्तर लाख पेपरबैक पुस्तकें तैयार कराकर पढ़ने के लिए नि:शुल्क वितरित की जायँ। रेलवे के अधिकारी आशा करते हें कि यात्री पुस्तकें पढ़कर लौटा देंगे। उनको विश्वास है कि इस प्रकार के साक्षरता-अभियान से अपराध की प्रवृत्ति घटेगी और स्वच्छ समाज बनेगा।

मेक्सिको नगरी की आबादी लगभग 85 लाख है। उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ अपराध आकाश चूम रहा है। उसके उन्मूलन के लिए नयी अवधारणा प्रशासन में जगी हे। ऐसा ख्याल है कि यत्र-तत्र पुस्तकालय कायम कर और पाठ्य-पुस्तकें छापकर नि:शुल्क वितरित की जायँ। इससे दुर्व्यसन में संलिप्त व्यक्ति, जिनमें प्राय: शिक्षित होते हैं, कुमार्ग से सन्मार्ग पर आ जायँगे। जापान में भी अपराध-नियंत्रण के लिए ऐसा प्रयोग हुआ है। परियोजना का मुख्य लक्ष्य है कि राष्ट्रीय स्तर पर साक्षरता की गति तीव्र से तीव्रतर बढ़ायी जाय और निर्धन व्यक्तियों को, जो पुस्तकें खरीदने की स्थिति में नहीं हैं, उन्हें नि:शुल्क पुस्तकें पढ़ने के लिए दी जायँ। मेक्सिको अधिकारी आशा करते हैं कि इस कार्यक्रम के द्वारा जहाँ साक्षरता का प्रसार व्यापक होगा वहाँ अपराध की प्रवृत्ति घटेगी। मेट्रो रेलवे में जेबकटी तथा अपराध की प्रवृत्तियों के नियंत्रण के उद्देश्य से यह परियोजना चालू की जा रही है।

साहित्य की विशिष्टता

साहित्य सबसे विलक्षण और अन्य विधाओं का सहयोगी है। शब्द और अर्थ के सामञ्जस्य पर ही सभी विधाओं की सफलता निर्भर करती है। शब्दार्थ और समष्टि का संबल सभी को लेना पड़ता है, किन्तु साहित्य की विशिष्टता यह है कि इसमें हृदय पक्ष समाहित होता है। **— प्रो० राजेन्द्र मिश्र**

कुलपति, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

नई पुस्तकें

चुनल गीत

सम्पादक

कृपाशंकर शुक्ल

मूल्य : 80.00

ISBN : 81-7124-326-6

लोकगीत हमारी धरोहर है, परन्तु बहुत से लोकगीत विलुप्त हो रहे हैं। ऐसे ही भोजपुरी लोकगीतों को संरक्षित करने का स्तुत्य कार्य साहित्यकार और कवि पं० कृपाशंकर शुक्ल ने किया है। पं० कृपाशंकर शुक्ल ने भोजपुरी गीतों का संकलन 'चुनलगीत' शीर्षक से किया है। बिहार और उत्तर भारत के पूर्वी भाग में दूर-दूर तक समृद्ध भोजपुरी साहित्य है। यही नहीं यहाँ के लोगों के मारीशस, त्रिनिडाड, आदि देशों में रहने से वहाँ भी भोजपुरी राज करती है। 'चुनलगीत' में श्रेष्ठ रचनाकारों की प्रतिनिधि रचनाएँ शामिल हैं।

आवरण चित्र प्रतिभावान चित्रकार एल० उमाशंकर सिंह का है। 'चुनलगीत' की भूमिका साहित्य प्रेमी, काव्य अनुरागी और ख्यातिलब्ध आई०पी०एस० अधिकारी सूर्यकुमार शुक्ल ने लिखी है। पुस्तक में अब्दुर्रहमान गेहुंवासागरी, अभिष्ट देव पाण्डेय, अच्युतानंद 'आनंद', इन्द्रकुमार दीक्षित, उमाशंकर चतुर्वेदी 'कंचन', कृपाशंकर शुक्ल, डॉ० कमलेश राय, चन्द्रशेखरप्रसाद शर्मा 'परवाना', जीतेन्द्र सिंह जीत, स्व० त्रिलोकीनाथ उपाध्याय, देवेन्द्रकुमार पाण्डेय, अर्मदेव सिंह आदर, प्रकाशमणि तिवारी सहित अनेक रचनाकारों की रचनाएँ शामिल हैं। सम्पादक व प्रकाशक का प्रयास सराहनीय है। पुस्तक संग्रहणीय है। —'गांडीव' में *अत्रि भारद्वाज*

हिन्दी का गद्य-साहित्य

चतुर्थ परिवर्धित संस्करण

डॉ० रामचन्द्र तिवारी

पृष्ठ : 938 मूल्य : 600.00

ISBN : 81-7124-358-4

हिन्दी गद्य साहित्य का समग्र और व्यवस्थित अध्ययन।

सभी स्तरों पर नवीनतम सामग्री का समावेश।

अवधारणाओं के विकास और सामाजिक सन्दर्भों के बदलाव की द्वन्द्वात्मक स्थिति का विवेचन।

नवीनतम गद्य-विधाओं का विशद विवेचन।

वैचारिक अन्तर्धाराओं के सकारात्मक पक्ष पर बल।

अट्ठाइस गद्य लेखकों का सारगर्भित, सन्तुलित और आग्रह-मुक्त विवेचन।

''यह हिन्दी के गद्य-साहित्य का प्रामाणिक दस्तावेज है। समग्रता और सघनता दोनों दृष्टियों से यह पुस्तक महत्त्वपूर्ण है। समग्रता का आलम यह है कि लेखक ने भारतेन्दु पूर्व से लेकर आज तक के हिन्दी गद्य के विकासमान स्वरूप की प्रामाणिक पहचान प्रस्तुत की है तथा हर विधा में लिखी गयी सभी महत्त्वपूर्ण रचनाओं और पुस्तकों का लेखा-जोखा एवं आकलन प्रस्तुत किया है। यहाँ तक कि पत्र-पत्रिकाओं का भी संक्षिप्त किन्तु प्राय: समग्र परिचय दिया है। यह पुस्तक गद्य-साहित्य का इतिहास भी है और मूल्यांकन भी। इतिहास है, इसलिए गद्य-भाषा और उसमें लिखी जा रही विविध साहित्य विधाओं के क्रमिक विकास की स्पष्ट और प्रामाणिक पहचान उभरती है। इस प्रक्रिया में लेखक ने विविध साहित्यांदोलनों और वादों की मूल प्रकृति का विश्लेषण किया है। मूल्यांकन भी है। अत: लेखक ने विविध लेखकों और उनकी कृतियों का विशेषत: प्रमुख कृतियों का बहुत थोड़े में किन्तु सारभूत रूप में विश्लेषण और मूल्यांकन किया है।''

डॉ० रामदरश मिश्र

वट वृक्ष की छाया में

कुमुद नागर

पृष्ठ :168 मूल्य : 190.00

ISBN : 81-7124-346-0

कुमुद नागर की 'वटवृक्ष की छाया में' एक ओर नागर परिवार की चार पीढ़ियों की गाथा है, दूसरी ओर पिता श्री अमृतलाल नागर की जीवन कथा, जो कुमुदजी ने एक भावुक पुत्र की भाँति नहीं, बल्कि एक संवेदनशील कलाकार की हैसियत से लिखी है। नागरजी की रचनात्मक ऊर्जा, पारिवारिक इंटरएक्शन और घरेलू समस्याओं के साथ संघर्षण में उपजती रही है। घर्षण का प्रभाव जिस प्रकार नागरजी पर पड़ा, उसी प्रकार परिवार पर पड़ना भी स्वाभाविक था। यह प्रभाव परिवार ने किस प्रकार ग्रहण किये, उनके परिप्रेक्ष्य में नागरजी की क्या छवि उभरती है। यह पुस्तक उसे रेखांकित करती है। अपने आप में यह अत्यन्त रोचक और कहीं-कहीं बहुत विचलित कर देनेवाला लेखन है; खासतौर से वह पक्ष जो परम प्रतिभाशील रचनाकारों और कलाकारों के तनाव और संघर्ष को उजागर करता है।

'वटवृक्ष की छाया में' हिन्दी के सामान्य पाठक के लिये तो बहुमूल्य सिद्ध होगी ही, साहित्य के गम्भीर विद्यार्थियों और शोधार्थियों के लिये यह ऐसी सामग्री सम्पन्न है जो कहीं दूसरी जगह उपलब्ध नहीं। पुस्तक में नागरजी के पारिवारिक तथा साहित्यिक जीवन के अनेक दुर्लभ चित्र दिये गये हैं।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक व्यक्तित्व चित्र

ज्ञानचंद जैन

पृष्ठ : 160 मूल्य : 190.00

ISBN : 81-7124-361-4

हिन्दी नवजागरण के प्रथम पुरुष, युग-प्रवर्तक, सर्वतोमुखी प्रतिभासम्पन्न भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जीवन अत्यन्त विविधतापूर्ण और रसमय था। उनके साहित्य में उनका व्यक्तित्व झलकता है। 35 वर्ष के लघु जीवन में उन्होंने देश को, समाज को, साहित्य को नई दिशा प्रदान की। पत्र-पत्रिकाएँ, साहित्यिक कृतियाँ उनकी आत्म प्रकृति की सुरभि बिखेरती हैं।

भारतेन्दु की दानशीलता, रसिकता, अक्खड़पन, मुक्तहस्त पैसा लुटाने की प्रवृत्ति, उनके व्यक्तित्व के प्रमुख अंग हैं। स्वाभिमान ऐसा कि—

सेवक गुनीजन के, चाकर चतुर के हैं,
कविन के मीत, चित हित गुन गानी के।
सीधेन सों सीधे, महा बांके हम बांकेन सों,
'हरिचन्द' नगद दमाद अभिमानी के।
चाहिबे की चाह, काहू की न परवाह, नेही,
नेह के, दिवाने सदा सूरति-निवानी के।
सरबस रसिक के, सुदास दास प्रेमिन के,
सखा प्यारे कृष्ण के, गुलाम राधा रानी के।

दानशीलता के फलस्वरूप यह दिन भी देखना पड़ा—

मोहि न धन के सोच भाग्य बस होत जात धन।
पुनि निरधन सो देस न होत यहौ गुनि गुनि धन।
मों कहं एक दुख यह जू प्रेमिन ह्वै मोहे त्याग्यौ।
बिना द्रव्य के स्वानहु नहिं मोसो अनुराग्यौ॥
सब मिलन छोड़ी मित्रता बन्धुन नातौ तज्यों।
जो दास रह्यौ मम गेह को,
मिलन हूँ मैं अब सो लज्यौ॥

घर फूँक तमाशा देख को चरितार्थ करने वाले ऐसे उन्मुक्त अभिमानी के मनमोहक संघर्षपूर्ण व्यक्तित्व की झलकियाँ हैं, इस कृति में। अनेक दुर्लभ चित्र।

प्राचीन भारत में यक्ष पूजा

डॉ० (श्रीमती) कमलेश दूबे

पृष्ठ : 152 मूल्य : 250.00

ISBN : 81-7124-366-5

प्राचीन भारतीय धर्म और कला में लोकजीवन को विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है विभिन्न धार्मिक आस्थाओं में जहाँ एक ओर मुख्य देवों को मान्यता मिली, वहीं दूसरी ओर उन अधिदेवों को भी मान्यता मिली जो मुख्यत: धर्म के लौकिक पक्ष से जुड़े थे। इन्हीं

लौकिक देवताओं की श्रेणी में यक्ष एक महत्त्वपूर्ण देवता हैं।

यक्ष-पूजा लोकधर्म में निरन्तर दिखायी देती है। किन्तु यक्ष-मूर्तियों एवं यक्ष पूजा का कालक्रमानुसार समुचित अध्ययन एवं व्याख्या अभी तक उपेक्षित थी। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए यक्ष-पूजा एवं उनकी मूर्तियों को इतिहास-क्रम में रखने का प्रयास किया गया है।

प्रत्येक मूर्ति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, उनके स्वरूप, मुद्राएँ, आभूषण आदि के विवरणों का विशेष विश्लेषण करते हुए इन मूर्तियों की परस्पर विशेषताओं का तुलनात्मक विवेचन किया गया है।

अन्त में यक्षों की देवरूपों में मान्यता, उपासना देवस्वरूप मूर्ति, तत्सम्बन्धी लक्षण, भक्त आदि दृष्टिकोणों से प्राप्त सामग्री का विवरण दिया गया है। इससे यह ज्ञात होता है कि लोक परम्परा में आज भी किसी न किसी रूप में यक्ष-पूजा विद्यमान है।

यक्ष मूर्तियों के छवि चित्र 24 पृष्ठों में दिये गये हैं।

आसन एवं योग मुद्राएँ

प्राचीन भारत में शरीर-साधन शास्त्र की पद्धति

डॉ० रविन्द्रप्रताप सिंह

पृष्ठ : 200 मूल्य : 250.00

ISBN : 81-7124-365-7

भारतीय सभ्यता और संस्कृति के विकसित ऐतिहासिक काल में आसन एवं मुद्राओं के प्रतीकात्मक महत्त्व और भावदर्शन की मुख्यत: चार परम्पराएँ हैं—नाट्यशास्त्र, योगशास्त्र, पूजा-पद्धति तथा कला की परम्परा।

नाट्यशास्त्र की परम्परा के अनुसार मनुष्य का सम्पूर्ण शरीर उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार भावों को शारीरिक, मानसिक और वाचिक क्रियाओं के रूप में अभिव्यक्त करता है। योगशास्त्र की परम्परा के अनुसार बैठने के विभिन्न स्वरूपों में सम्पूर्ण शरीर को कार्यशील या सक्रिय माना जाता है। पूजा-पद्धति में देवता के प्रति श्रद्धा और भक्ति के भावों की शब्द के माध्यम के साथ-साथ शारीरिक मुद्राओं द्वारा प्रदर्शित या व्यक्त करने की परम्परा का विकास मिलता है। कला के अन्तर्गत आसन एवं मुद्राओं की परम्परा स्वयं देवता के मूर्ति-शास्त्रीय स्वरूप में दिखाई गयी है।

प्राचीन भारत में शरीर-साधनों की पद्धति का शास्त्रीय, ऐतिहासिक तथा कलात्मक विवेचन।

प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व, नाट्यशास्त्र एवं शरीर-साधना शास्त्र के अध्येताओं के लिए महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ। 187 रेखाचित्र, 26 हाफटोन चित्र।

शिव काशी

डॉ० प्रतिभा सिंह

पृष्ठ : 284 मूल्य : 400.00

ISBN : 81-7124-370-3

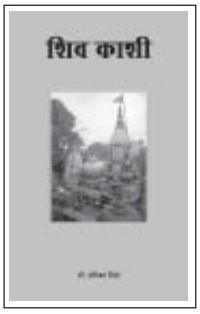

'शिव काशी' पौराणिक परिप्रेक्ष्य से प्रारम्भ होकर वर्तमान सन्दर्भ में शिव-मयी काशी के बहुआयामी पक्षों की व्याख्या पर एक प्रमाणित दस्तावेज है। पहली बार तीर्थ-विज्ञान (तीर्थोलाजी) की आधारशिला स्थापित करने का प्रयास किया गया है। विषयवस्तु को सात अध्यायों में वर्णित किया गया है—प्रथम अध्याय में तीर्थों के अध्ययन की प्रवृत्ति, आयामों की समीक्षा तथा भविष्यत् प्रारूप का ढाँचा। द्वितीय अध्याय में शिव के ऐतिहासिक तथ्यों को मिथकों, इतिहास, विभिन्न काल तथा आधुनिक सन्दर्भ में समीक्षा। तृतीय अध्याय में शैव स्थलों की परम्परा को ब्राह्मणीय, वैश्विक तथा क्षेत्रीय प्रारूप के सन्दर्भ में वर्णित प्रतीकों का विश्लेषण। चतुर्थ अध्याय में काशी के धार्मिक भूगोल में शिव का स्थान, काशी का उद्‌भव, शिवजनित मिथकों, शैव स्थलों के विविध रूप, प्रकार तथा महत्त्व का विवरण। पंचम अध्याय में काशी की शिव यात्राओं, तीर्थाटन पथ, विभिन्न तीर्थपथों पर शिव के विविध रूपों, भूवैन्यासिक प्रारूप एवं क्षेत्रगत परिसीमाओं का वर्णन। षष्ठम् अध्याय में शिव-सम्बन्धित पर्व-त्योहारों, पवित्र एवं पुण्य काल तथा अनुष्ठानों का विस्तृत लेखा-जोखा। सप्तम अध्याय में तीर्थयात्रा पर्यटन में शिव का महत्त्व, वैकल्पिक पर्यटन, धरोहर नियोजन, संभाव्यता तथा मानव नियोजन की उपयोगिता की झाँकी। परिशिष्ट में १२ ज्योर्तिलिंगों, १२ स्वयंभूलिंगों तथा काशी खण्डोक्त ५२४ शिवरूपों की पौराणिक सूची एवं स्थिति दी गई है।

पुस्तक में शिव मूर्तियों के 32 दुर्लभ छाया चित्र, 35 रेखाचित्र तथा 15 तालिका दिये गये हैं।

मुक्तिबोध और उनकी कविता

डॉ० बृजबाला सिंह

पृष्ठ : 208 मूल्य : 180.00

ISBN : 81-7124-374-6

गजानन माधव मुक्तिबोध (१९१७-१९६४ ई०) की सर्वप्रथम पहचान 'अज्ञेय' के 'तार सप्तक' (१९४३ ई०) से हुई।

मुक्तिबोध 'तार सप्तक' के प्रथम कवि थे। कवि से अधिक विचारक थे। उनकी दृष्टि मार्क्सवादी थी। वे कल्पनाशील कवि थे। अपने राजनीतिक चिन्तन की अभिव्यक्ति वे फैंटेसी के माध्यम से करते थे। सौन्दर्यशास्त्रीय चिन्तन करते या साहित्यिक रचनाओं में अपनी संवेदना की अभिव्यक्ति, उनकी राजनीतिक दृष्टि प्रधान रहती थी। वर्तमान का बोध करते हुए भविष्य का स्वप्न देखते थे। मुक्तिबोध जीवनपर्यन्त अभावों से, गरीबी से, समस्याओं से जूझते रहे, संघर्ष की यथार्थ दृष्टि से उनकी रचनाएँ बोझिल हो उठती हैं। 'मुक्तिबोध और उनकी कविता' मुक्तिबोध की रचनाओं के माध्यम से उनकी अनुभूति, चिन्तन, कल्पना और संवेदना को समझने का प्रयास है।

स्त्रीत्व : धारणाएँ एवं यथार्थ

प्रो० कुसुमलता केडिया
प्रो० राजेश्वरप्रसाद मिश्र

पृष्ठ : 192 मूल्य : 150.00

ISBN : 81-7124-372-X

विश्व की 'एकेडमिक्स' यूरोईसाई सिद्धान्तों, अवधारणाओं एवं विचार-प्रत्ययों से संचालित है। आधुनिक स्त्री-विमर्श पूरी तरह पापमय, हिंसक और सेक्स के विभिन्न आतंक से पीड़ित ईसाइयत द्वारा गढ़ा गया है। गैरईसाई देशों एवं सभ्यताओं में उनके अपने ऐतिहासिक, सामाजिक एवं धार्मिक परिदृश्य में उभरी-पनपी 'स्त्रीत्व' की धारणा एकेडमिक बहस के बाहर है।

यह पुस्तक इस यूरोकेन्द्रित पूर्वाग्रह को किसी सीमा तक संतुलित करने का प्रयास करती है। हिन्दू दृष्टि से स्त्री-विमर्श की गैरईसाई सभ्यताओं में विद्यमान स्त्री-विमर्श को सामने लाकर।

यह पुस्तक बताती है यूरोप में कैथोलिकों एवं प्रोटेस्टेन्टों ने पाँच सौ शताब्दियों में करोड़ों निर्दोष, सदाचारिणी, भावमयी श्रेष्ठ स्त्रियों को डायनें और चुड़ैल घोषित कर जिन्दा जलाया, खौलते कड़ाहों में उबाला, पानी में डुबो कर मारा, बीच से जिन्दा चीरा, घोड़े की पूँछ में बँधवा कर सड़कों-गलियों में इस प्रकार दौड़ाया कि बँधी हुई स्त्री लहूलुहान होकर दम ही तोड़ दे!

ये सभी पाप छिप-छिपा कर नहीं, सरेआम पूरे धार्मिक जोशो-खरोश से, पादरियों की आज्ञा से, पादरियों के प्रोत्साहन से और पादरियों की उपस्थिति में किये जाते थे तथा चर्चों के सामने सूचीपत्र टँगे रहते थे कि स्त्रियों को खौलते तेल में उबालने के लिए 48फ्रैंक, घोड़े द्वारा शरीर के चार टुकड़ों में फाड़ने के लिए 30 फ्रैंक, जिन्दा गाड़ने के लिए 2 फ्रैंक, चुड़ैल करार दी गयी स्त्री को जिन्दा जलाने के लिए 28फ्रैंक, शिशु को बोरे में भरकर डुबोने के लिए 24 फ्रैंक, जीभ, कान, नाक काटने के लिए 10 फ्रैंक, तपती लाल सलाख से दागने के लिए 10 फ्रैंक, जिन्दा चमड़ी उतारने के लिए 28 फ्रैंक लगेंगे।

कौन विश्वास करेगा कि ख्रीस्तीय यूरोप में सेक्स एक आतंक था और गोरे पुरुष अपनी औरतों से थरथराते काँपते डरते रहते थे कि जाने कब उसके काम-आकर्षण में फँस जाँय क्योंकि स्त्री तो शैतान का औजार है, प्रचण्ड सम्मोहक और 'ईविल' है। कैथोलिक पोपों के पापों से और घरों के भीतर उसकी

दखलन्दाजी से घबड़ा कर प्रोटेस्टेन्ट ईसाईयों ने 'पति परमेश्वर है' की धारणा रची, यह आज कितने लागे जानते हैं ? ख्रीस्तपंथी यूरोप में सन् 1929 तक स्त्री को व्यक्ति नहीं माना जाता था, स्त्रियों को आँख के अलावा शेष समस्त देह को ख्रीस्तपंथ के आदेशों के अन्तर्गत ढँककर रखना अनिवार्य था और पति-पत्नी का भी समागम सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार एवं रविवार के दिनों में वर्जित एवं दण्डनीय पाप घोषित था।

पोप इनोसेन्ट के जुलूस में आगे-आगे सैकड़ों निर्वसन स्त्रियाँ एवं दोगले बच्चे चलते थे, यह कितनों को पता है ?

अविवाहित 'सेलिबेट' पादरियों को वेश्या-कर देना अनिवार्य था और ख्रीस्तीय राज्य उन पादरियों के लिए लाइसेंसशुदा वेश्यालय चलाता था, विवाह एक धत्-कर्म था तथा वेश्या होना विवाहित होने की तुलना में गौरवमय था—ख्रीस्तपंथी पादरियों की व्यवस्था के अनुसार। ऐतिहासिक यथार्थ के इन महत्त्वपूर्ण पक्षों की प्रामाणिक प्रस्तुति करनेवाली यह पुस्तक विश्व की श्रेष्ठ 25 विश्व-सभ्यताओं में स्त्री की गरिमापूर्ण स्थिति की भी प्रामाणिक विवेचना करती है और हिन्दू स्त्रियों के समक्ष उस दायित्व को रखती है जो उन्हें वैश्विक मानवीय सन्दर्भों में शुभ, श्रेयस एवं तेजस की पुनर्प्रतिष्ठा के लिए निभाना है।

लाई हयात आए

(स्मृति / लेखा)

लक्ष्मीधर मालवीय

डबल क्राउन अठ पेजी, पृष्ठ : 210

मूल्य : 280.00

ISBN : 81-7124-369-X

व्यक्तिगत संस्मरणों तथा विचारोत्तेजक लेखों के इस अनोखे संगम में है बहुरंगी चरित्र! परिवार राजनीतिक-सामाजिक कार्यों के केन्द्र में, देश के अति प्रसिद्ध व्यक्तियों का सम्पर्क लेखक को बचपन के दिनों ही से मिला। महामना मालवीय के परिवार के अब तक अज्ञात प्रसंग; बाबू शिवप्रसाद गुप्त, राय कृष्णदास, पण्डित ब्रजमोहन व्यास आदि अपने-अपने कार्यक्षेत्र में अप्रतिम व्यक्ति एक ओर, तो दूसरे छोर पर गुमनामी में वर्षों श्मशान की बारादरी में पड़े हुए लुप्त हो जाने को अभिशप्त लेखक के विचक्षण कवि-मित्र, अथवा एक प्रिय जापानी सहयोगी—क्या उन्होंने आत्महत्या की ? कहाँ पर ? उनका तो शव भी न मिला!

असाधारण कर दिखाने की ललक, लेखक ने अनुसंधान की अटपटी राह चुनी, लुप्तप्राय प्राचीन कवियों की काया को पुनजीर्वित करने की! बनारस से बीकानेर तक, पूरे उत्तर भारत का चप्पा-चप्पा छान मारने का वृत्तांत एक खोजी की कहानी है।

बसा-बसाया अपना घर-द्वार छोड़कर किस लिए चल दिया वह, बाहर! माता ने कहा, 'कस्तूरीमृग!' उसने उत्तर दिया, ''यह ताल मुझे छोटा लगता है!'' होगा! ''देखो, हमारे देश को कीड़े कहाँ लगे हैं! हिन्दी सड़ क्यों गई है! यह पचास करोड़ मनुष्य को गूँगा बना रही है! प्रमाण क्या अब भी चाहिए ?''

Daishik Shastra

Badrishah Thulgharia

Pages : 222 Rs. 250.00

ISBN : 81-7124-369-X

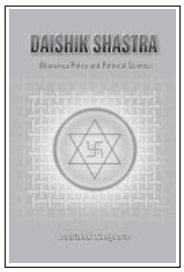

Daishik Shastra is a unique work that present the quintessence of Bharatiya Civilization, Culture, Philosophy, Economics, Political Science and Dharma Shastra (Science of Sustaining Code). When the Western Civilizations and Cultures were busy over-powering this country and our people were fighting a fierce battle for attaining freedom from the alien Rule, Shri Badrishah Thulagharia wrote Daishik Shastra and enunciated the ideals of Bharatiya way of life by arousing self-consciousness of his countrymen, so that the special characteristics of our ideology and conduct constantly remain before them, inspire them and help them in determining the future course of their struggle.

Revealing as it does the vital core of Bharatiya Political Science, this literary work would enlighten every intellectual, statesman, administrator and citizen about the glorious traditions of our nation and build up their morale by arousing their national awareness.

"I was astonished a bit initially by reading its title Daishik Shastra; but when I read the book thoroughly from beginning to end, respect and praise took the place of surprise. For the first time, I had come across such an excellent book on oriental Politics. A glance at it creates, on one hand, an awareness of the core originality, natural solemnity, eternal principles and their utility; whereas on the other, it brings home the instability and immaturity, so glaringly seen in the western politics."

—Mahatma Gandhi

"I have read your Daishik Shastra with great pleasure. My view is entirely in accord with yours and I am glad to find that it has been forcefully put forward by you."

—Bal Gangadhar Tilak

Yogirajadhiraj Swami

Vishuddhanand Paramahansadeva

Life & Philosophy

Nand Lal Gupta

Pages : 404 Rs. 400.00

ISBN : 81-7124-356-8

Paul Brunton, a British Journalist, has, in his book A Search in Secret India, stated about Baba as under—

"One of the most impressive amongst Yogis of this twentieth century is Yogiraj Shri Vishuddhanand Paramahansa (1853-1937). The Yogiraj's seemingly unscientific and illogical miracles are, in fact, genuine yogic siddhis. It was, in fact, at first very difficult for my mind, trained in logic and the physical science and believing implicitly only in the rational order of the universe, to accept the reality of such apparently irrational phenomena. Yet inwardly I felt, from the elevating splendour of his presence, that the yogiraj was by no means an imposter and that I had withnessed genuine miracles. Along with miraculous powers, went deep love, compassion and the God-knowledge that opens the door to a new elevated vision of life. He had the wonderful powers of the Holy Spirit, the power of purity which liberates the soul, gives man control over the whole of nature and shows God into him."

The book describes a few of his numberless miracles relating to subjects like—travel through space; bringing back the dead to life; converting one form of matter into another; producing scents, sweets and fruits; seeing things far distant; multiplying small amount of food etc. into large quantities; appearing simultaneously in several distant places at the same instant; healing the sick and deformed; telepathy; clair-voyance; pre-cognition; power to read

minds; to see through walls and go across them without hindrance; to foretell future events and even to mentally cause or change the motion of physical objects. These miracles go to prove his super-human powers by which he infused 'Confidence in Divinity' for the upliftment of society and alleviated its sufferings.

Indian Artificial Satellites

Prof. S.N. Ghosh

Pages : 172 Rs. 200.00

ISBN : 81-7124-309-6

After World War II science and technology improved in India to a great extent. In two fields the advancements are comprehensive, namely in Nuclear Physics. In this book the advancement of Space Physics in India is considered in detail.

वी०एस० नायपॉल के भारत विमर्श पर केन्द्रित

साखी

प्रेमचंद साहित्य संस्थान (वाराणसी-गोरखपुर) की ओर से प्रकाशित होने वाली साहित्यिक पत्रिका साखी (सम्पादक : सदानन्द शाही, 11 विजयनगर गिलट बाजार, वाराणसी, मूल्य : 50 रुपये, पृष्ठ : 184) का नया अंक नोबेल पुरस्कार विजेता भारतीय मूल के लेखक वी०एस० नायपॉल के भारत-विमर्श पर केन्द्रित है। नायपॉल के पुरखे भारत से त्रिनिदाद गये और वहाँ एक नयी दुनिया बसायी, पर उनकी स्मृति में भारत की जीवन्त उपस्थिति बनी रही। इस स्मृति ने पूरे समुदाय के विस्थापन के गहन एहसास से भर दिया। नायपाल का लेखन विस्थापन की इसी पीड़ा का दस्तावेज है। शायद इसीलिए नायपॉल अपने जीवन और लेखन दोनों में ही जड़ों की तलाश के लिए बार-बार भारत आते हैं।

इण्डिया ए वुन्डेड सिविलाइजेशन में नायपाल कहते हैं—''भारत मेरे लिए बहुत मुश्किल देश है। यह न मेरा घर है और न मेरा हो सकता है; लेकिन फिर भी मैं इसे खारिज नहीं कर सकता, और न ही इसके प्रति उदासीन हो सकता हूँ।''

साखी के इस अंक में नायपॉल के भारत-विमर्श पर विस्तार से विचार करते हुए हरीश त्रिवेदी, रामकीर्ति शुक्ल, पी०एन० सिंह और रघुवंश मणि के लेख तथा प्रख्यात विचारक एडवर्ड सईद की टिप्पणी दी गई है। इसके साथ ही नायपॉल के समूचे लेखन से प्रतिनिधि चयन का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। इसके पीछे मंशा यह है कि हिन्दी के पाठक नायपॉल के बारे में स्वतंत्र रूप से अपनी राय कायम कर सकते हैं।

नायपॉल का भारत-विमर्श क्या सचमुच भारत को समझने की कोई नयी और वस्तुगत दृष्टि प्रदान करता है।

पितामह

(उपन्यास)

अमरनाथ शुक्ल

पृष्ठ : 208 मूल्य : 200.00

ISBN : 81-7124-374-6

महाभारत हमारा इतिहास है। उसके हर पात्र का अलग-अलग इतिहास है। प्रमुख पात्रों पर अनेक कथा-कहानियाँ और उपन्यास लिखे गये हैं। प्रस्तुत उपन्यास पितामह भीष्म पर है, जिनके जीवन के पूर्वार्ध में कोई कामना-वासना नहीं थी, बल्कि दूसरों की कामना-वासना की पूर्ति के लिए वे आजीवन अपने को होमते रहे। उत्तरार्ध में उपेक्षा, अपमान, एकाकीपन, विवशता और पक्षपात के लांछन की पीड़ा भोगते रहे। महाभारत का अधिकांश राजनीतिक सत्ता के लिए संघर्ष और परिणामत: वंश का नाश है। पौराणिक इतिहास के चरित-नायक पितामह भीष्म की गाथा आज भी मानव-जीवन की समसामयिक प्रवृत्ति को उजागर करती है। पुस्तक की भाषा-शैली, विषय-विश्लेषण और चरित-चित्रण की रोचकता अपने आप में आकर्षक है। अमरनाथ शुक्ल का यह पहला मौलिक उपन्यास है। इससे पहले उन्होंने गुजराती और उड़िया के दो उपन्यासों का अनुवाद किया है। प्रस्तुत उपन्यास हर दृष्टि से पठनीय और संग्रहणीय है। **—पानासि**

भारतीय वाङ्मय

मासिक

वर्ष : 5 **फरवरी 2004** **अंक : 2**

प्रधान सम्पादक

पुरुषोत्तमदास मोदी

सम्पादक

परागकुमार मोदी

वार्षिक शुल्क

रु० 40.00

अनुरागकुमार मोदी

द्वारा

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

के लिए प्रकाशित

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०

वाराणसी

द्वारा मुद्रित

E-mail : sales@vvpbooks.com

Website : **www.vvpbooks.com**

डाक रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2003 RNI No. UPHIN/2000/10104

प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत

Licenced to post without prepayment at

G.P.O. Varanasi

Licence No. LWP-VSI-01/2001

सेवा में,

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

विश्वविद्यालय प्रकाशन

प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

(विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह)

विशालाक्षी भवन, पो०बाक्स 1149

चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN

Premier Publisher & Bookseller

(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIAN)

Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149

Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)

: Offi. : (0542) 2421472, 2353741, 2353082, (Resi.) 2436349, 2436498, 2311423 ● Fax : (0542) 2353082